



THE TIMES OF INDIA

Date: 04-02-25

## We Chat, They Die

*Millions are affected in conflicts centred on mining of a metal vital for smartphones.  
No one cares*

### TOI Editorial

Eastern DR Congo looks like another of those interminable ethno-political conflicts in Africa. A UN report last year found that both Rwanda and Uganda are supporting the rebel M23 group that took control of the key Congolese city of Goma last week. Burundi, meanwhile, is working with Congolese forces to fight the rebels. And reports have surfaced of Romanian mercenaries being employed by Kinshasa. But scratch the surface – literally – and you can spot ruthless global commercial calculations.

The Congo conflict may be about something we all hold in the palm of our hands – smartphones. To be precise, a rare metal called tantalum, highly valued by smartphone makers for its ability to hold a large amount of electrical charge. Tantalum is extracted from its ore, coltan, of which DR Congo is a major producer. At least 40% of the global supply of the metal comes from the country. And M23 rebels now control some of the key mines in eastern DR Congo. UN estimates that last year rebels smuggled at least 150 metric tonnes of coltan into Rwanda. True, a certification scheme called Itsci is meant to prevent blood tantalum/ coltan from getting into global supply. But it's difficult to implement because of local conditions. There are strong suspicions that tantalum from DR Congo is being smuggled into Rwanda where it is mixed with legit supply of the mineral.

Of course, global electronics and smartphone manufacturers are only too happy to look the other way. Global smartphone shipments in 2024 reached 1.2 bn units. So the conflict in DR Congo makes hundreds of companies profitable. And with wars in Africa taking low international political priority, few govts seem to care about the 4 mn internally displaced persons in eastern DR Congo. Everyone important loves a good war when money is to be made.

---



*Date: 04-02-25*

## **Tariff turmoil**

### ***Donald Trump is triggering a trade war over unrelated bilateral issues***

#### **Editorial**

President Donald Trump set the cat among the pigeons globally when he introduced a slew of punishing tariffs on trade with Canada, Mexico, and China, with even more taxes promised for other trading partners in the months ahead. Markets in Japan, South Korea and across Asia were roiled as fears peaked of the fallout on supply chains for North America, particularly in sectors such as automobiles, which have enjoyed the strong presence of foreign investment for decades. Over the weekend, Mr. Trump signed three executive orders that slapped Canadian and Mexican goods with a tariff of 25%. Only Canadian energy products were spared — a 10% tax will be applied. The White House further announced, in line with the promises Mr. Trump made on the campaign trail, a 10% tax on goods from China. Beijing responded angrily, saying that it would file a lawsuit with the WTO against the U.S. for “wrongful practice”, even as it said that it would take “necessary countermeasures....” While Ottawa and Mexico City warned that retaliatory tariffs would be coming soon, Mr. Trump’s subsequent calls to Mexican President Claudia Sheinbaum led to a one-month pause before the tariffs kicked in, and the White House appeared to strike a conciliatory note with Mr. Trump speaking to Canadian Prime Minister Justin Trudeau as well. Meanwhile Mr. Trump has suggested that the EU was next in the firing line, even though the U.K. appeared to win a modicum of a reprieve for issues with Washington.

While tariffs are traditionally applied sparingly, and mostly in cases of trade imbalances in the context of artificial price barriers imposed by one country that impact its trading partners, the official reasoning supplied by the Trump White House for its tariff plan was that it would serve to address the “national emergency” resulting from “the extraordinary threat posed by illegal aliens and drugs, including deadly fentanyl”. On one hand, this opens the floodgates to other nations retaliating to U.S. tariffs and dampening world trade at a time when global economic growth prospects are precarious. The move also signals that it is acceptable for nations to weaponise tariffs as a countermeasure against unrelated inter-country disputes. Few would deny Mr. Trump’s administration the prerogative that it enjoys to crackdown on the U.S.’s “ridiculous Open Borders” — but most would have imagined that this process would entail intensified law enforcement activity rather than internecine tariffs. The tariffs will almost certainly have a deleterious effect on the prices that American consumers pay for imported products, besides a broader inflationary impact through higher input prices across industries. Perhaps it will take a full four years of economic pain in the U.S. before the realisation dawns that tariffs are hardly a panacea to curb immigration and drug inflows.

---

# दैनिक भास्कर

Date: 04-02-25

## अमेरिका के रुख को हम एक अवसर की तरह लें

### संपादकीय

ट्रम्प ने तमाम देशों पर वाणिज्यिक टैक्स लगाना शुरू कर दिया है। अतीत में अगर अमेरिका किसी देश से व्यापार करता था तो इसके ऐवज में उस देश की वैश्विक मुद्दों पर अलिखित सहमति रहती थी। यूएन और उसकी तमाम संस्थाएं अमेरिका के फंड से चलती रही हैं। विश्व बैंक और आईएमएफ में आज भी अमेरिकी और यूरोपियन प्रमुख ही होते हैं। यह सच है कि अमेरिकी व्यापार में असंतुलन है और भारत के अलावा चीन को भी उसका लाभ मिलता है। भारत का चीन से व्यापार अमेरिका के मुकाबले नुकसानदेह है। चीन का वैश्विक व्यापार में बड़े पैमाने पर आना भू-राजनीतिक असंतुलन भी पैदा कर रहा है। लिहाजा व्यापार को लेकर ट्रम्प की चिंता अमेरिका के हित में गलत नहीं है। फिर कोई भी दूसरा देश अमेरिका से उदारता का स्थायी दावा कैसे कर सकता है? लेकिन अगर इसी रवैये के तहत ट्रम्प डब्ल्यूएचओ को मदद बंद कर देते हैं तो इसकी कीमत अमेरिका को दो तरह से चुकानी होगी। पहला, उसका दुनिया में वर्चस्व कम होगा और दूसरा, दुनिया के तमाम देश नया ब्लॉक बनाकर वैश्विक संस्थाओं को खड़ा करेंगे और अमेरिकी बाजार का भी विकल्प तलाशेंगे। अमेरिका अगर भारतीय व्यापार पर टैक्स लगाता है, तो भारत को अपने माल को स्तरीय और सस्ता बनाना होगा यानी इसे एक अवसर के रूप में लेना होगा।

Date: 04-02-25

## बजट की इस महत्वपूर्ण बात पर कम ध्यान गया है

### शेखर गुप्ता, ( एडिटर-इन-चीफ, 'द प्रिन्ट')



इस बार बजट का सबसे साहसी और सकारात्मक बयान राजनीति और रणनीतिक मामलों के क्षेत्र से संबंध रखता है। यह है परमाणु ऊर्जा एक्ट और 'सिविल लायबिलिटी ऑन न्यूक्लियर डैमेज एक्ट' में संशोधन का इरादा।

2047 तक 100 गीगावॉट (1 गीगावॉट यानी 1,000 मेगावॉट) परमाणु बिजली उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है। डोनाल्ड ट्रम्प की वापसी के बाद इस लक्ष्य में फटाफट संशोधन किया गया है। अगर ट्रम्प लेन-देन पर जोर

देते हैं तब भारत उनसे 'लेने' के बदले उन्हें क्या 'देने' की पेशकश कर सकता है?

बड़ी परमाणु खरीद (वेस्टिंगहाउस बिजली कंपनी को याद कीजिए, जो कार्बन मुक्त ऊर्जा के लिए परमाणु टेक्नोलॉजी उपलब्ध कराती है) जादुई नतीजे दे सकती है। इसके लिए भारत को 2010 में यूपीए सरकार द्वारा पारित 'परमाणु क्षति के लिए नागरिक दायित्व अधिनियम' (सीएलएनडीए) नामक कानून में संशोधन करना पड़ेगा, जो अपने जन्म के साथ ही मरणासन्न हो गया था।

इसमें यह शर्त भारतीय जनता पार्टी के दबाव में ही जोड़ी गई थी कि परमाणु हादसे की स्थिति में ऑपरेटर मुआवजे का दावा करने के लिए सप्लायर पर मुकदमा चला सकता है। सिविल न्यूक्लियर संधि के मामले पर विश्वास मत में हारने के बाद भाजपा ने यूपीए (और भारत) को स्वच्छ ऊर्जा के लिए संधि करने से रोक दिया था।

यह कानून आज जिस रूप में है, वह परमाणु ऊर्जा के लिए पूरक मुआवजे से संबंधित समझौते (सीएससी) का उल्लंघन करता है। यह ऑपरेटर की जवाबदेही को सीमित करता है और सप्लायर को मुक्त करता है। उस परमाणु संधि के मामले में हार को लेकर भाजपा की खीझ को इत्तेफाक से भोपाल गैस हादसे पर सुप्रीम कोर्ट के 2010 के फैसले के रूप में सटीक समय पर अनुकूल माहौल मिल गया। इसने जवाबदेही वाले मुद्दे को वापस जनमत में उभार दिया। वामपंथी और दक्षिणपंथी खेमे पर्यावरणवादियों के साथ जुड़ गए और जवाबदेही वाले कानून का गला घोट दिया गया।

भाजपा आज अगर उस कानून के 'विषदंत' निकाल दे, तो इससे अर्थव्यवस्था, पर्यावरण और सबसे ऊपर रणनीति के मामलों में लाभ ही हासिल होंगे। यह वैसा ही स्वागतयोग्य बदलाव होगा, जैसा मोदी सरकार ने सिविल परमाणु संधि को अपनाकर और अमेरिका की ओर रणनीतिक झुकाव दर्ज करा कर किया था।

परमाणु ऊर्जा एक्ट में संशोधन का अर्थ होगा परमाणु बिजली उत्पादन का मामला बिजली मंत्रालय को सौंपना। अगर मोदी सरकार ये संशोधन करवा लेती है तो इसका उसे घरेलू राजनीति में फायदा ही मिलेगा। आंध्र प्रदेश ने 6,600 मेगावाट वाले एक परमाणु बिजली संयंत्र के लिए 2067 एकड़ जमीन आवंटित भी कर दी है।

वह दौर बीत चुका, जब बजट राजनीतिक अर्थनीति, खासकर आर्थिक सुधारों पर सरकार के नए विचारों को रेखांकित किया करते थे। इसकी दो वजहें हैं। एक तो यह कि राजनीतिक अर्थनीति अब राजनीतिक नेतृत्व यानी नरेंद्र मोदी के हाथों में है। दूसरी यह कि जब बजट में की जाने वाली घोषणाओं की बात आती है तो उनको लेकर जनमानस में पहले ही काफी संदेह व्याप्त हो चुका है।

पिछले 11 वर्षों में आर्थिक सुधारों की बड़ी घोषणाएं बजट में नहीं बल्कि महामारी के दौरान कई प्रेस घोषणाओं में की गईं। उनमें कृषि सुधारों से लेकर श्रम कानूनों तक अधिकांश घोषणाएं अपनी दिशा खो चुकी हैं। कृषि कानूनों को तो रद्द ही कर दिया गया है और बाकी घोषणाएं सिस्टम के जाल में उलझकर रह गई हैं।

इस बजट की सुर्खी बनने लायक बात मध्यवर्ग के विशाल निचले तबके में 12 से 24 लाख की सालाना आय वाले लोगों को आयकर में दी गई राहत है, लेकिन यह 2019 में उद्यम को नई तेजी देने की उम्मीद में कॉर्पोरेट जगत को दी गई रोनाल्ड रीगन मार्का दुस्साहसी टैक्स छूट की तुलना में कुछ भी नहीं है।

निजीकरण को तो दफन करके भुला ही दिया गया है। पिछले कुछ महीनों से प्रधानमंत्री दावे कर रहे हैं कि उनके पूर्ववर्तियों की तुलना में उनके राज में सार्वजनिक उपक्रम काफी बेहतर प्रदर्शन कर रहे हैं और पिछले सप्ताह उन्होंने कांग्रेस और 'आप' से उधार लिए गए मुहावरों का प्रयोग किया- 'सर्वसमावेशी आर्थिक वृद्धि' और 'आम आदमी'।

इंदिरा गांधी ने अपनी लोकसभा के अवैध छठे साल में संविधान की प्रस्तावना में जो 'धर्मनिरपेक्ष व समाजवादी' शब्द दाखिल करवाए, उन पर भी दोनों पक्षों की मुहर लग गई है। भारत की राजनीतिक अर्थव्यवस्था अपने पुराने आधारों पर पहुंच गई है या बेबाकी से कहूं तो कांग्रेस के समाजवादी आधारों पर !

## बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 04-02-25

### शुल्कों से निपटने की हो रणनीति

#### संपादकीय

पिछले साल चुनाव प्रचार अभियान के दौरान अमेरिका के राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने कहा था कि शुल्क 'उनका पसंदीदा शब्द' है। 20 जनवरी को पद संभालने के बाद ट्रंप अपने एजेंडे में शामिल सभी बातों को लागू करने के लिए फुर्ती से कदम बढ़ा रहे हैं। लिहाजा अगर ट्रंप प्रशासन ने कनाडा, मेक्सिको से आयातित सामान पर 25 प्रतिशत और चीन से आने वाली वस्तुओं पर 10 प्रतिशत शुल्क लगाने की घोषणा की है तो इसमें किसी को आश्चर्य नहीं होना चाहिए। ट्रंप ने यह भी कहा है कि यूरोपीय संघ (ईयू) पर भी जल्द ही शुल्क लगाया जाएगा। यहां चौंकाने वाली बात एक ही है कि अमेरिका ने अपने मित्र और सहयोगी देशों पर अधिक शुल्क थोपा है मगर चीन पर कम शुल्क लगाया गया है। चुनाव प्रचार अभियान के दौरान ट्रंप ने चीन से आने वाले सामान पर 60 प्रतिशत तक शुल्क लगाने का वादा किया था, इसलिए 10 प्रतिशत शुल्क तो उनके इस वादे से मेल नहीं खाता है। मगर ट्रंप के ये कदम एक निश्चित खांचे में बैठते जरूर दिख रहे हैं क्योंकि वह अधिकनायकवादी शासकों की तुलना में अमेरिका के सहयोगी लोकतांत्रिक देशों के खिलाफ अधिक कड़ा तेवर अपनाते रहे हैं। परंतु इन शुल्कों के परिणाम मुद्रास्फीति के रूप में भी दिख सकते हैं और इस बात की चिंता ट्रंप प्रशासन के दिलो-दिमाग में जरूर घूम रही होगी। यही कारण है कि कनाडा से तेल आयात पर मात्र 10 प्रतिशत शुल्क लगाने की घोषणा की गई है। कनाडा से आने वाला तेल अमेरिका में ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है। चीन पर शुल्क लगाने से मुद्रास्फीति का जोखिम कितना बढ़ेगा इस बारे में अनुमान लगाना फिलहाल मुश्किल है।

ट्रंप के इन कदमों के पीछे जिम्मेदार कारणों के अलावा भारत को एक खास बात दिमाग में रखनी चाहिए। ट्रंप एक हाथ से लेने और एक हाथ से देने यानी सौदा बराबर करने में विश्वास रखते हैं। कनाडा और मेक्सिको पर इतने अधिक शुल्क इसलिए लगाए गए हैं कि क्योंकि ट्रंप अमेरिका के पड़ोसी देशों के साथ जल्द से जल्द अनुकूल सौदा करना चाह रहे होंगे। मगर चीन और यूरोपीय संघ जैसे बड़े व्यापारिक साझेदार देशों के साथ बातचीत और मोलभाव ज्यादा करना पड़ेगा, इसलिए शुरुआती शुल्कों का मकसद इस मोर्चे पर बातचीत और सौदेबाजी की गुंजाइश बनाए रखना है। भारत को ऐसी रणनीति अपनानी होगी, जिसमें इन सभी पहलुओं का ध्यान रखा जाए। कुछ बदलाव स्पष्ट रूप से दिखने भी लगे हैं।

शनिवार को संसद में पेश बजट में इस संबंध में काफी कुछ स्पष्ट कर दिया गया। प्रभावी शुल्क दरों का वास्तव में कितना असर होगा यह हमेशा स्पष्ट नहीं होता है मगर यह संदेश जरूर दे दिया गया कि भारत ट्रंप प्रशासन से शुल्कों के रूप में मिलने वाली किसी चुनौती को टालने के लिए सीमा शुल्कों में एकतरफा कमी करने के लिए तैयार है।

राष्ट्रपति ट्रंप के निर्णयों को अमेरिका की चिंताएं दूर करने के लिए कदम उठाने की उनकी इच्छाशक्ति और ताकत के विभिन्न संकेतों के रूप में देखा जाना चाहिए। आखिर अमेरिका की जनता ने ट्रंप के वादों पर गौर करने के बाद ही उन्हें सत्ता सौंपी है। भारत को उन वस्तुओं की पहचान करनी होगी, जिनकी भारतीय बाजारों में पहुंच बढ़ने से अमेरिकी प्रशासन अधिक खुश हो सकता है। इसके अलावा अगर ट्रंप भारत पर कोई शुल्क लगाते हैं तो उनके लिए जवाबी कदम भी तैयार रहने चाहिए और इन्हें लेकर संकेत भी स्पष्ट होने चाहिए। भारत को न तो कम तवज्जो दी जा सकती है और न ही ट्रंप के दोबारा राष्ट्रपति चुने जाने के बाद वैश्विक व्यापार में आए बदलाव से ही वह इनकार कर सकता है। परंतु सरकार को यह भी समझना चाहिए कि नए व्यापारिक साझेदारों के साथ रिश्ते तैयार करने और पुराने संबंधों में मजबूती बढ़ाने के लिए यह एकदम माकूल समय है। अमेरिका के कदमों से वैश्विक व्यापार को जो चोट पहुंच रही है, उनके बीच टिके रहने के लिए व्यापारिक साझेदारों के साथ संबंध मजबूत बनाने होंगे। फिर बात चाहे क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी जैसे बहुपक्षीय सौदों की हो या उन द्विपक्षीय समझौतों (जैसे यूरोपीय संघ के साथ) की जिन्हें प्रभावी बनाने में देरी हो रही है।

# जनसत्ता

Date: 04-02-25

## उपेक्षा का दंश झेलते बुजुर्ग

लालजी जायसवाल



पिछले दिनों शीर्ष न्यायालय ने एक निर्णय में कहा कि अगर बच्चे बुजुर्ग मां-बाप की देखभाल नहीं करते, तो उनके नाम हस्तांतरित की गई संपत्ति उनसे वापस ली जा सकती है। अदालत को यह निर्णय इसलिए देना पड़ा, क्योंकि एक बुजुर्ग महिला ने इस आधार पर बेटे के नाम की गई संपत्ति रद्द करने की मांग की थी कि उसने संपत्ति हासिल करने के बाद उसकी देखभाल करनी बंद कर दी थी। उसकी गुहार पर मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया था कि माता-पिता की देखभाल न करने पर बच्चों को दी गई संपत्ति वापस नहीं ली जा सकती।

बहरहाल, यह स्वागतयोग्य है कि शीर्ष अदालत ने इस फैसले को पलट कर महिला को राहत दी। लेकिन क्या इससे समाज और विशेष रूप से उन बच्चों को कोई सबक मिलेगा, जो मां-बाप की संपत्ति हासिल करने के बाद भी उनकी देखभाल नहीं करते या फिर उन्हें उनके हाल पर छोड़ देते हैं? इसी कारण पश्चिमी देशों की तरह अपने देश में भी

वृद्धाश्रम बढ़ रहे हैं, लेकिन यह समझा जाना चाहिए कि सभी बुजुर्ग आर्थिक रूप से इतने सक्षम नहीं होते कि वृद्धाश्रम में रह सकें।

यह किसी से छिपा नहीं है कि बच्चों की उपेक्षा से त्रस्त और आर्थिक रूप से अक्षम बुजुर्ग दर-दर की ठोकरें खाने को मजबूर हो रहे हैं। चूंकि एकल परिवारों का चलन बढ़ रहा है, इसलिए वृद्धाश्रमों की आवश्यकता बढ़ रही है। बुजुर्गों के स्वास्थ्य और आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति पर अध्ययन की रपट के अनुसार देश के हर चार में से तीन बुजुर्ग किसी न किसी गंभीर रोग का शिकार हैं। हर चौथा बुजुर्ग ऐसी कई बीमारियों से और हर पांचवां किसी मानसिक रोग से पीड़ित है। जीवन-प्रत्याशा जो कुछ दशक पहले तक 45 वर्ष थी, वह आज लगभग 70 वर्ष है। यानी बुजुर्ग बढ़ रहे हैं। रपट के मुताबिक, जिन घरों में बुजुर्ग हैं, उनके यहां का प्रति व्यक्ति खर्च भी इसी अस्वस्थता से ज्यादा है।

फिलहाल, देश में हर दस लोगों में एक बुजुर्ग है। हर चौथा वृद्ध अपने रोजमर्रा के काम करने में दिक्कत झेलता है। समुचित और सस्ती स्वास्थ्य सुविधा के अभाव में हर दस में नौ वृद्ध घर में ही अपना इलाज कराते हैं, जबकि हर तीसरा वृद्ध दिल का मरीज है। सवाल है कि आखिर बुजुर्गों की देखभाल से समाज विमुख क्यों हो रहा है? आज मनुष्य का सामाजिक जीवन खतरे में है। वह अपने घर के बड़े-बूढ़ों की समुचित देखभाल तक ठीक से नहीं कर रहा है। वृद्धाश्रमों में भी कोई विशेष इंतजाम नहीं है।

सरकार ने आयुष्मान भारत योजना लागू की है, लेकिन इसमें केवल चालीस फीसद लोग शामिल हैं। हर विकासशील अर्थव्यवस्था में सरकारी नीति 60 वर्ष से अधिक आयु के लोगों के लिए मुफ्त स्वास्थ्य बीमा की है। आज एकल परिवार के दौर में बुजुर्गों के लिए सरकार को उनके सम्मानपूर्ण जीवन के लिए नीति, संस्थाएं और सामाजिक चेतना विकसित करनी होगी। वृद्धाश्रमों में कुछ व्यवस्था की कमी को दूर करना होगा। यहां वृद्धों के लिए मनोरंजन सुविधाओं के अभाव के साथ समुचित चिकित्सा व्यवस्था की कमी है। सरकार ने इन समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया है। इससे बुजुर्ग स्वाभिमान के साथ जीवन बिता सकेंगे। सवाल है कि जब वरिष्ठ नागरिकों के लिए अनेक सरकारी योजनाएं हैं, तो फिर उनकी हालत चिंताजनक क्यों है? गौरतलब है कि बुजुर्गों को अपमान का सामना करना पड़ता है, उनको तिरस्कार की नजर से देखा जाता है। साथ ही उनको वित्तीय परेशानी के अलावा मानसिक और शारीरिक उत्पीड़न का भी सामना करना पड़ता है। अक्सर समाज उनसे भेदभाव करता है। अस्पतालों, बस अड्डों, सार्वजनिक वाहनों तथा बाजार में बुजुर्गों के साथ दुर्व्यवहार के मामले सामने आते हैं।

रपट के अनुसार, सबसे ज्यादा अवसादग्रस्त बुजुर्ग, मध्यप्रदेश में 17 फीसद, उत्तर प्रदेश में 14 फीसद, दिल्ली में 11 फीसद और बिहार एवं गोवा में दस फीसद हैं। किसी भी समाज को तब तक सभ्य, विकसित और संवेदनशील नहीं कह सकते, जब तक उसके असहाय और बीमार बुजुर्गों की मुफ्त देखभाल करने वाली व्यवस्था न हो। दुनिया में अधिकांश बेहतर अर्थव्यवस्था वाले देशों में बुजुर्गों के स्वास्थ्य के लिए सरकार की कल्याणकारी नीति है। वैसे भी भारत में स्वास्थ्य पर जीडीपी का नाममात्र का ही खर्च किया जा रहा है। इस वक्त यह दुनिया का सबसे युवा देश है।

अमेरिका के जनसंख्या संदर्भ ब्यूरो के एक अध्ययन के मुताबिक वर्ष 2050 तक आज का युवा भारत तब 'बूढ़ा' हो जाएगा। ऐसा अनुमान है कि भारत में अभी छह फीसद आबादी साठ साल या उससे अधिक की है, लेकिन 2050 तक बुजुर्गों की यह संख्या बढ़ कर बीस फीसद तक होने का अनुमान है। उस समय देश में पैंसठ साल से अधिक उम्र के लोगों की संख्या तीन गुना बढ़ जाएगी। संयुक्त राष्ट्र की जनसंख्या कोष से जुड़ी 'इंडिया एजिंग रपट' 2023 के अनुसार

भारत में 2022 में 60 वर्ष से ऊपर की जनसंख्या 10.5 फीसद या 14.9 करोड़ थी। इसके वर्ष 2050 में 20.8 फीसद या 34.7 करोड़ हो जाने का अनुमान है। इसे देखते हुए हर पांच लोगों में एक वृद्ध हो जाएगा। इसका प्रभाव स्वास्थ्य, समाज और अर्थव्यवस्था पर पड़ना तय है।

वृद्धों की आबादी बढ़ने का सबसे बड़ा कारण रोगों से लड़ने के तरीकों में बढ़ोतरी का होना है। इससे जीवन प्रत्याशा बढ़ रही है। भारत समेत कई देशों में प्रजनन दर घट रही है। इससे भी वृद्ध-जनसंख्या अधिक हो रही है। भारत में वृद्ध पुरुषों की अपेक्षा वृद्ध महिलाएं अधिक हैं। दूसरी ओर, कार्यबल में महिलाओं का फीसद कम है। इन स्थितियों में वृद्ध महिलाओं की आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा एक चुनौती बनी हुई है। सवाल है कि क्या इस देश में सभ्यता और मानवता कम होती जा रही है? क्या वरिष्ठ जनों की सामाजिक सुरक्षा तिरोहित हो गई है?

बुजुर्गों के लिए चलाई गई वय वंदन योजना, अनुदान सहायता योजना, राष्ट्रीय वृद्ध पेंशन योजना, राष्ट्रीय वयोश्री योजना, स्वावलंबन योजना और अटल पेंशन योजना जैसी अनेक प्रकार की योजनाओं के माध्यम से सरकार बुजुर्गों को सहायता प्रदान करने का प्रयास कर रही, लेकिन सभी योजनाएं एकमुश्त राशि निवेश करने की मांग करती हैं, लेकिन बुजुर्गों की आर्थिक हालात इतनी सही नहीं होती कि उनको इन तमाम योजनाओं में निवेश कर लाभ दिला सके। वैसे तो बुजुर्गों की देखभाल की जिम्मेदारी परिवार और समाज की है। जब परिवार ही देखभाल से मुकरता जा रहा है, तो सरकार से क्या आशा रखेंगे?

हमें समझना होगा कि बुजुर्ग हमारे धरोहर हैं और उनकी देखभाल सभी का कर्तव्य है। इसके लिए समाज को आगे आना होगा। केवल सरकारी प्रयास कारगर साबित नहीं होंगे। बुजुर्गों की सामाजिक सुरक्षा संकट में है, जिसका एक कारण योजनाओं का जमीनी स्तर पर सही से प्रचलन न हो पाना भी है। बुजुर्गों के लिए अस्पताल में अलग कतार का प्रबंध किया जाता है। कुछ राज्यों के अस्पतालों में वरिष्ठ जनों के लिए विशेष क्लीनिक की व्यवस्था है, लेकिन यह कुछ राज्यों में ही है। इसका दायरा समस्त राज्यों में बढ़ाने की जरूरत है, क्योंकि वरिष्ठ नागरिकों की स्थिति सभी राज्यों में दयनीय है।

## डोनाल्ड ट्रंप ने छेड़ दिया व्यापार युद्ध

गौरव वल्लभ, ( अर्थशास्त्री व भाजपा नेता )

ट्रेड वार यानी व्यापार युद्ध मिसाइलों और तोपों से नहीं लड़े जाते, पर ये उतनी ही तबाही मचा सकते हैं। ये युद्ध आंकड़ों, नीतिगत दांव और राजनीतिक वीरता से लड़े जाते हैं। यह जंग अब कहां शुरू हुई ? असल में, अमेरिका के नए राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने नए टैरिफ का प्रस्ताव रखकर आर्थिक तोप का एक ऐसा गोला दागा है, जो वैश्विक बाजार को हिला सकता है और व्यापारिक रिश्तों को नए सिरे से परिभाषित कर सकता है।



टैरिफ किसी भी देश के आर्थिक शस्त्रागार का सबसे पुराना शस्त्र है। मुक्त व्यापार समझौतों और विश्वव्यापी मूल्य श्रृंखलाओं के आने से पहले राज्यों व शासकों ने इसका ढाल और तलवार, दोनों रूपों में इस्तेमाल किया, ताकि घरेलू उद्योगों को वे प्रतिस्पर्धा से बचा सकें और जवाबी टैरिफ के साथ प्रतिस्पर्द्ध अर्थव्यवस्था पर हमला बोल सकें। ब्रिटिश राज ने इस खेल को बखूबी खेला, भारत के उद्योगों को टैरिफ के भार से दबाया और यह सुनिश्चित किया कि उप महाद्वीप ब्रिटिश उत्पादों से भर जाए। भारत ने इससे सबक सीखा। आजादी के बाद के संरक्षणवाद से लेकर आज के समय में आयात शुल्क लगाने की सोची-समझी नीति तक, हमने टैरिफ का इस्तेमाल राष्ट्रीय हितों की रक्षा और अपने उद्योगों को बढ़ावा देने में किया है। मगर अब इतिहास खुद को दोहरा रहा है। हां, इस बार युद्ध का मैदान वैश्विक है, दांव ऊंचे हैं और खिलाड़ी पहले की तुलना में कहीं अधिक परस्पर जुड़े हुए हैं। सवाल यह है कि क्या टैरिफ की यह नई लहर अर्थव्यवस्थाओं को मजबूत करेगी या खुद हमारा ही नुकसान करेगी?

कनाडा व मेक्सिको पर 25 फीसदी और चीन पर 10 फीसदी टैरिफ लगाने की डोनाल्ड ट्रंप की नई घोषणा ने आर्थिक अस्थिरता का एक नया दौर शुरू कर दिया है। 'अमेरिका प्रथम' की नीति के साथ शुरू हुई यह जंग विश्व व्यापार को नया रूप देने जा रही है और सरकारों व उद्योगों को अपनी रणनीतियों पर फिर से सोचने को मजबूर कर रही है। इसके तात्कालिक परिणाम स्पष्ट हैं- आयात लागत का बढ़ना, आपूर्ति श्रृंखला में रुकावट और बहुराष्ट्रीय कारोबार में अनिश्चितता की लहर। उत्तरी अमेरिका में काम करने वाली ऑटोमोटिव, इलेक्ट्रॉनिक्स और उपभोक्ता वस्तु बनाने वाली कंपनियों की लागत अब खास तौर पर बढ़ने लगी है। इसका असर उपभोक्ताओं पर पड़ सकता है, जब विदेशी प्रतिस्पर्द्ध कंपनियां बढ़े हुए शुल्क का सामना करती हैं, तब घरेलू कंपनियां भी अमूमन अपनी कीमतें बढ़ा देती हैं। माना जा रहा है कि नए टैरिफ के कारण अमेरिका में हर साल बिकने वाली करीब 1.6 करोड़ कारों की कीमतों में 3,000 डॉलर का इजाफा हो सकता है।

इस टैरिफ का असर अमेरिकी सीमाओं तक सीमित नहीं रहेगा। बेशक, अमेरिका मजबूत घरेलू बाजार के कारण सुरक्षित रह जाए, लेकिन कनाडा और मेक्सिको जैसे देशों को, जहां जीडीपी में कारोबार की हिस्सेदारी 70 फीसदी तक है, काफी नुकसान उठाना पड़ सकता है। ब्लूमबर्ग इकोनॉमिक्स का अनुमान है कि चुनिंदा उत्पादों पर 25 फीसदी टैरिफ से मेक्सिको की जीडीपी को 16 फीसदी का नुकसान हो सकता है। यह एक ऐसा झटका है, जो पूरे लैटिन अमेरिका में फैल सकता है।

यहां चीन की चर्चा भी जरूरी है, क्योंकि उसके लिए व्यापार युद्ध कोई नई बात नहीं है, मगर पिछले कुछ वर्षों में उसने अपनी आर्थिक निर्भरता को कई हिस्सों में बांट दिया है। इसके कारण उसकी जीडीपी में आयात और निर्यात की हिस्सेदारी महज 37 फीसदी रह गई है, जो 2000 के दशक की शुरुआत में 60 फीसदी से ज्यादा थी। बेशक नया अमेरिकी टैरिफ उसे परेशान करेगा, पर वह पहले की तुलना में कहीं अधिक सुरक्षित है।

जहां तक विश्व अर्थव्यवस्था की बात है, तो सवाल सिर्फ टैरिफ का नहीं, बल्कि विश्वास का है। वर्षों की श्रमसाध्य मेहनत से तैयार व्यापार समझौते अब नाजुक लगने लगे हैं। नियम-आधारित वैश्विक अर्थव्यवस्था के अब ऐसी व्यवस्था में बदल जाने का खतरा बढ़ गया है, जहां आर्थिक गठबंधन आपसी लाभ के बजाय सियासी सनक से निर्धारित होंगे। वैश्विक निर्माताओं की सबसे बड़ी चिंता एकीकृत आपूर्ति श्रृंखला में आने वाली बाधा है। जो उद्यमी पहले निर्बाध रूप से सीमा पार व्यापार करते थे, अब उन्हें उंची कीमत चुकानी होगी। इसी तरह, अन्य देशों ने भी अगर जैसे को तैसा की नीति अपनाई, तो दुनिया भर में व्यापार युद्ध छिड़ सकता है।

बहरहाल, हालात पर भारत की नजर बनी हुई है। कनाडा, मेक्सिको या चीन के विपरीत, हम पर इसका तत्काल असर तो नहीं पड़ने वाला। हालांकि, अमेरिकी व्यापार घाटे में नौवें सबसे बड़े योगदानकर्ता के रूप में भारत भी ट्रंप के रडार पर है। अमेरिका भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है और हमारा आपसी कारोबार वित्त वर्ष 2024 में 77.5 अरब डॉलर पर पहुंच चुका है, जबकि 35 अरब डॉलर का ट्रेड सरप्लस भारत के पक्ष में है। जिन महत्वपूर्ण क्षेत्रों में बदलाव देखने को मिल सकते हैं, वे हैं- कपड़ा (वित्त वर्ष 2024 में 10 अरब डॉलर का कारोबार), इंजीनियरिंग ( 17.6 अरब डॉलर), इलेक्ट्रॉनिक्स (10 अरब डॉलर) और फार्मास्यूटिकल्स (8.7 अरब डॉलर का कारोबार ) । हालांकि, ये बदलाव भी इस पर निर्भर करेंगे कि टैरिफ युद्ध के जवाब में वैश्विक व्यापार क्या रूप लेता है ?

वैसे, यह हमारे लिए अवसर भी है। यदि चीन को अमेरिकी बाजार में रोका जाता है, तो उसकी जगह भरने में भारतीय निर्यातक कदम बढ़ा सकते हैं। इलेक्ट्रॉनिक और कपड़ा ऐसे ही उद्योग हैं। सुखद है, वैश्विक तनाव बढ़ने के बावजूद भारत के आम बजट में सीमा शुल्क की औसत दर 11.65 प्रतिशत से घटाकर 10.66 फीसदी कर दी गई है, जिससे विश्व व्यापार में सकारात्मक संदेश गया है। इससे आपसी विश्वास पर आधारित भारत-अमेरिका व्यापारिक रिश्ते के और मजबूत होने की उम्मीद है।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की आगामी अमेरिका यात्रा भी द्विपक्षीय संबंध को नया आकार देगी। भारत-अमेरिका के बीच मजबूत आर्थिक और कूटनीतिक रिश्तों को देखते हुए, यह मानने के पर्याप्त कारण हैं कि भारत इन चुनौतियों का प्रभावी ढंग से सामना कर लेगा। हमारा ध्यान मैन्युफैक्चरिंग को विस्तार देने, बुनियादी ढांचों को मजबूत बनाने और वैश्विक उथल-पुथल के बीच स्थिर विकल्पों की तलाश कर रहे कारोबारियों के लिए भारत को एक आकर्षक गंतव्य बनाने पर होना चाहिए। बेशक, दुनिया बढ़ते टैरिफ को लेकर चिंतित हो, लेकिन हमें अपने लक्ष्य पर स्थिर रहना चाहिए, जो है दुनिया में तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था और मैन्युफैक्चरिंग महाशक्ति बनना ।

*Date: 04-02-25*

## तरक्की के रास्ते पर अपना लोहा मनवाता तमिलनाडु

एस. श्रीनिवासन, ( वरिष्ठ पत्रकार )

वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने बजट भाषण में भले ही आधा दर्जन से अधिक बार बिहार का नाम लिया, पर तमिलनाडु ने आर्थिक सर्वेक्षण और बजट दस्तावेज में चुपचाप सुर्खियां बटोर लीं। इसने साबित कर दिया कि अंततः राजनीति से ज्यादा महत्वपूर्ण है राज्य का प्रदर्शन । आगामी दिल्ली व बिहार विधानसभा चुनावों पर नजर रखते हुए वित्त मंत्री ने बजट में कई घोषणाएं कीं। पर वह और उनके मुख्य आर्थिक सलाहकार नागेश्वरन जहां भी जरूरत थी, वहां तमिलनाडु को श्रेय देने से नहीं कतराए । इस वर्ष के आर्थिक सर्वेक्षण में असाधारण सामाजिक व व्यावसायिक पहल और कामयाबियों के लिए तमिलनाडु की कई बार प्रशंसा की गई है। आम बजट ने तमिलनाडु की कामयाबी की कहानियों को मजबूती दी है।

भारत में कुल जीडीपी में मैन्युफैक्चरिंग या विनिर्माण उद्योगों की हिस्सेदारी बमुश्किल 12 से 13 फीसदी है, इसे 25 प्रतिशत तक ले जाने का लक्ष्य है और यह लक्ष्य लगातार सरकार से दूर जा रहा है। हालांकि, भारत ने सेवा क्षेत्र में काफी अच्छा प्रदर्शन किया है, पर विनिर्माण क्षेत्र में वैश्विक रुझानों, विशेष रूप से चीन के साथ तालमेल बिठाने में असमर्थ है। विनिर्माण या वस्तु निर्माण क्षेत्र में तेज विकास जरूरी है, ताकि ग्रामीण जनता को खेत से कारखाने तक लाने में सुविधा हो। वैसे, देश में सिर्फ तीन राज्य महाराष्ट्र, गुजरात व तमिलनाडु ही विनिर्माण केंद्र बनने में सफल रहे हैं, जो वैश्विक प्रतिस्पर्धा का सामना कर सकते हैं। कर्नाटक चौथा राज्य है।

तमिलनाडु ने स्वास्थ्य एवं शिक्षा में सामाजिक कार्यक्रमों के अलावा ड्रिप सिंचाई, नकदी फसलों, बागवानी, समुद्री खाद्य पदार्थ, संरक्षण और पर्यावरण से संबंधित मुद्दों पर अपनी ताकत का प्रदर्शन किया है। यही कारण है कि आर्थिक सर्वेक्षण में इस राज्य का नाम 40 से अधिक बार लिया गया है। सर्वेक्षण में यह भी बताया गया है कि तमिलनाडु अधिक विदेशी निवेश प्राप्त करने में कामयाब रहा है, क्योंकि इसने हर निवेशक को समर्पित 'निवेश सुविधाकर्ता नियुक्त किया है। पूर्व मुख्य आर्थिक सलाहकार अरविंद सुब्रमण्यम ने भी एक उदाहरण के जरिये बताया था कि तमिलनाडु को विदेशी उद्यमों के लिए क्यों अनुकूल माना जाता है। फोर्ड मोटर्स ने कुछ साल पहले मिशिगन में अपनी नीतियों में एक निश्चित बदलाव के कारण भारत छोड़ने का फैसला किया था। फोर्ड ने चेन्नई के पास स्थित अपना कारखाना बंद कर दिया ।

कोई और सरकार होती, तो विदेशी कंपनी से लड़ने लगती, पर तमिलनाडु सरकार ने फोर्ड की मदद की और छंटनी के शिकार कर्मचारियों को दूसरे रोजगार के लिए मनाया। फोर्ड चली गई, पर कुछ साल बाद जब माहौल अनुकूल हुआ, तो उसने फिर तमिलनाडु को ही चुना। वह तमिलनाडु सरकार से मिले सहयोग को भुला न सकी। तमिलनाडु ने पीएलआई या प्रोडक्शन लिंकड इंसेंटिव योजना में शानदार प्रदर्शन किया है। मोबाइल फोन के उपकरण, इलेक्ट्रॉनिक उपकरण व चिकित्सा उपकरणों के निर्माण के लिए इसने निवेश आकर्षित किया है। तमिलनाडु उत्तरी राज्यों के श्रमिकों को भी रोजगार दे रहा। जाहिर है, पीएलआई योजना की सफलता से उत्साहित सरकार ने इसका विस्तार किया है। तमिलनाडु फुटवेयर क्षेत्र में भारत के कुल उत्पादन में 38 प्रतिशत का योगदान देता है। भारत के कुल फुटवेयर निर्यात में इसकी 47 प्रतिशत हिस्सेदारी है।

इसके पास फुटवेयर उद्योगों के लिए विशेष नीति है, जिसकी वजह से नाइकी व ताइवानी फेंग टे जैसे दिग्गज समूह ने यहां निवेश किया है। वित्त मंत्री को उम्मीद है कि भारत विनिर्माण क्षेत्र में 22 लाख नौकरियां पैदा करने में सक्षम होगा, इनमें से बड़ी संख्या में नौकरियां तमिलनाडु के हिस्से में आएंगी। देश में वैश्विक जीसीसी (ग्लोबल कैपिबिलिटी सेंटर) का 17 प्रतिशत हिस्सा सक्रिय है और इनमें से 25 प्रतिशत तमिलनाडु में हैं। कई बहुराष्ट्रीय कंपनियों के बहुत से बैंक ऑफिस कार्य तमिलनाडु से ही होते हैं। वैसे, तमिलनाडु को अक्सर देश में भाषा, शिक्षा और स्वास्थ्य नीतियों पर केंद्र सरकार से दो-दो हाथ करते देखा जाता है। ऐसे में, केंद्रीय बजट में तमिलनाडु को दिया गया आर्थिक समर्थन हवा के ताजे झोंके की तरह है। और इससे पता चलता है कि केंद्र सरकार ने भी तमिलनाडु के बेहतर प्रदर्शन को स्वीकार किया है।